ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(1): 751-753
www.allresearchjournal.com
Received: 19-11-2015
Accepted: 17-12-2015

हर्षवर्द्धन कुमार
ग्रा. श्रीशिरनियां, पो. गोगरी, जि. खगड़िया, बिहार, भारत।

Corresponding Author:
हर्षवर्द्धन कुमार
ग्रा. श्रीशिरनियां, पो. गोगरी, जि. खगड़िया, बिहार, भारत।

सप्तक-संकलित कवियों की कहानियों का भाषिक वैशिष्ट्य

हर्षवर्द्धन कुमार

प्रस्तावनाः

अज्ञेय के अनुसार कवि होने के लिए आवश्यक है कि वह अर्थवान शब्दों का साधक हो। इस दृष्टि से सप्तक-संकलित कवि उपयुक्त माने जा सकते हैं, क्योंकि ये कवि अर्थखोजी हैं, उनके मुख्य शोध एवं चिंता अर्थ-प्राप्ति की ही रही है। इन कवियों की अर्थ-साधना तार सप्तक से प्रारंभ होकर अनवरत चलती ही रही। इन कवियों ने कविताओं तथा कहानियों के माध्यम से अपनी अर्थ-साधना को बखूबी अंजाम दिया। सप्तक-संकलित कवियों ने एक तरह जहां बुद्धिजीवियों को ध्यान में रखकर रचनाएं करनी प्रारंभ की, क्योंकि ये स्वयं भी उसी वर्ग से आते थे तथा चारों ओर की परिस्थितियों से भलीभांति परिचित थे, अतः उन्होंने मध्यमवर्ग की चिर-परिचित शैली में ही रचनाएं कीं, वहीं दूसरी ओर बदलते समाज और परिवेश को भी ध्यान में रखकर उन्होंने अपना सृजन-कार्य किया। इन कवियों ने अपनी कहानियों को अन्य साहित्यकारों से विभिन्न रखा और भिन्न होने का सबसे बड़ा कारण था, उनका भाषिक वैशिष्ट्य। भाषिक वैशिष्ट्य से हमारा तात्पर्य उनकी कहानियों के शिल्प, भाषा और विषयवस्तु आदि से है। यह दीगर बात है कि इन कवियों ने कविताओं के साथ-साथ साहित्य के दूसरे और सबसे सबल पक्ष कहानी को भी अपनाया। इनकी कहानियों के भाषिक वैशिष्ट्य को हम इस प्रकार विवेचित कर सकते है[1] -

कहानीकारों की शिल्पगत विशेषता की अगर बातें करें, तो शिल्प शब्द अंग्रेजी के टेकनीक का अनुवाद है। ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी में शिल्प की परिभाषा कुछ इस प्रकार दी गयी है: 'कलात्मक कार्यविधि की वह रीति, जो संगीत अथवा चित्रकला में प्राप्त है, शिल्प कहलाता है।'[2] कुछ इसी तरह इसके विषय में हिंदी शब्दकोश में भी कहा गया- 'शिल्प से अभिप्राय हाथ से कोई वस्तु तैयार करने आविा दस्तकारी या कारीगरी से है। जिस प्रकार कुम्हार मिट्टी से लोंदे को एक सुंदर रूप देता है, फिर वह रूप चाहे घड़े का, खिलौने अथवा मिट्टी के किसी अन्य बर्तन का हो, सी तरह कहानीकार या कवि भी अपनी रचनाओं का निर्माण करता है। चमत्कार दोनों ही जगह कल्पनाशीलता का ही है। यह उनकी शिल्पगत विशेषता ही है कि साहित्यकारों की प्रत्येक रचना एक-दूसरे से विभिन्न होती है।

सप्तक-संकलित कवियों की कहानियों की भी विशेषता उनका शिल्पगत वैशिष्ट्य ही है। इन कहानियों को उनका शिल्प ही विशेष और दूसरों से अलग बनाता है। ध्यातव्य है कि सप्तक-संकलित कवियों की कहानियां भी हिंदी-साहित्य में मील का पत्थर साबित हुई हैं। सधी कविताओं के उपरांत कहानियों की ओर इनका झुकाव होना ही इस बात का स्पष्टीकरण है कि इन कवियों का भाषा पर पूर्ण अधिकार है। अमूमन देखा जाता है कि कवि-कम करनेवाले कविताओं के बड़े-बड़े अलंकृत शब्दों के दायरे से बाहर नहीं निल पाते। सप्तक-संकलित कवियों ने कहानियों का भी लेखन बखूबी किया है।[3]

इन कवियों में कुछ ऐसे खास थे, जिनका यहां जिक्रा करना जरूरी है। इन्होंने कहानी के माध्यम से ही अपनी एक अलग पहचान बनायी है। इन सप्तक-संकलित कवियों में अज्ञेय, मुक्तिबोध, धर्मवीर भारती, नरेश मेहता, रघुवीर सहाय, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना तथा कुंअर नारायण के नाम उल्लेखनीय हैं। इन कवियों में धर्मवीर भारती एक महत्वपूर्ण लेखक हैं, जो कुशल किस्सागों के तौर पर भी जाने जाते हैं।

इनके साहित्य में जहां अनुभव की प्रौढ़ता है, वहीं संचलता की काल्पनिक उड़ान भी। भारतीजी की कहानियां संख्या में बहुत तो नहीं हैं, पर जितनी हैं वे महत्वपूर्ण हैं। इस संदर्भ में

निर्मल वर्मा लिखते हैं, 'उत्तर-पूर्वी भारत के कस्बाई जीवन का ताना-बाना जितने महीने रेशों से भारती ने अपने कथा-विन्यास में बुना, उतना शायद ही किसी समकालीन लेखक ने।' यदि हम भारतीय की कहानियों के शिल्प की बात करें, तो शिल्प-संबंधी नवीनता और टेकनीक को लेकर जितनी चर्चा भारतीजी की हुई, उतनी छठे दशक में हिंदी के शायद ही किसी अन्य कथाकार की हुई होगी। भारती की जितनी भी कहानियां हैं, वे प्रेम-कथा सी प्रतीत होती हैं, अत: भारतीजी सौहार्द्र एवं खुलेपन के साथ हरेक पात्र के भीतर प्रवेश कर जाते हैं। कथोपकथन या संवाद से ही कथा में प्राणतत्व जाग्रत होता है। उदाहरणस्वरूप 'कुलटा' कहानी में संवाद पात्रों की मानसिक स्थिति को स्पष्ट करता है, लाली के संवाद, उसकी दीनता, विवशता को प्रकट करते हैं, तो भैया के संवाद लाली के प्रति उसके शक को।

जैसे, 'तो, यह ढंग निकाला है? कमीनी, बदजात'

'नहीं भैया',

'मगर, उसने कोई बात नहीं की.....''

'अभी, इन लोगों का ढंग नहीं जानते, पूरी कुलटा है यह'

'क्यूं किसी पर तोहमर लगाते हो....'

'तोहमत..... जानते हो, विधवा है यह .... मैंने पहले ही दिन कह दिया था..'

'लेकिन, इतने से ही दुष्चरित्र कैसे हो गयी.....'

उपर्युक्त प्रसंगों से पात्रों की मन:स्थिति का पता बखूबी चल जाता है।

भारती की भाषा में विभिन्न उद्गम-स्रोतों से आए शब्दों का भी प्रयोग खूब देखने को मिलता है। इन्हें चारणों में विभाजित किया गया है - तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशज।

तत्सम- इसका शाब्दिक अर्थ है- उसके समान। हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में ऐसी समस्त संस्कृतसम और परंपरागत शब्दों को समाहित किया जाता है। हिंदी के अधिकर तत्सम शब्द प्राय: संस्कृत से आए हैं और उन्हें ज्यों का ज्यों स्वीकार कर लिया गया है। तत्सम के बारे में कहा गया है, 'आत्मा और शरीर की दृष्टि से हम कह सकते हैं कि सच्चे अर्थों में कोई शब्द तत्सम कहलाने का अधिकार तभी है, जब वह आत्मा एवं शरीर दोनों की दृष्टियों से संस्कृत के समान हो।' धर्मवीर भारती के कथा-साहित्य में प्रयुक्त तत्सम शब्द इस प्रकार हैं- राजा, मन, जल, मुंह, ऊंचा (हिरनाकुस और उसका बेटा)। मन, जल, कुल (हिरनाकुस और उसका बेटा)। पत्र, नगर (युवराज)। मुंह, नगर, हृदय (अगला अवतार), मन (मरीज नंबर 7)। व्यवहार, शासन, पत्नी, रात, हृदय (चांद और टूटे हुए लोग)। गोबर, मांस, जल, सौ, समास (बंद गली का आखिरी मकान)। आग, घी, घर (गुलकीबन्नों) इत्यादि .....[4]

तद्भव- डॉ. बालेंदुशेखर के अनुसार संस्कृत के जो शब्द भाषा परिवर्तन की स्वाभाविक प्रक्रिया से गुजरते हुए विकृत होकर हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में आए हैं, उन्हें तद्भव कहा गया है। हिंदी की सारी क्रियाएं और सर्वनाम तथा अधिकांस संज्ञाएं, विशेषण और क्रियाविशेषण तद्भव ही हैं ये शब्द संस्कृत से सीधे न आकर पाली, प्राकृत और अपभ्रंश से होते हुए हिंदी में आए हैं। भारती के कथा-साहित्य में निम्नलिखित तद्भव शब्द प्रयुक्त हुए हैं- आंख, बहन, आग, घी, नींद, घर, हाथ, दिन, सेठ, बारात, नदी, गेंहूं, सूअर, दांत (हरिनाकुस का बेटा)। चिड़िया, हाथ, आग, भैया, घर, पकवान, मामा (कुलटा)। तेल, पंखा, दांत, हाथ, मिट्टी, रात (अगला अवतार) बाबू, आग, दूध, मकड़ी, पीठ (चांद और टूटे हुए लोग)।

देशज-देश का अर्थ स्थान और ज का अर्थ जन्म लेना होता है, इस प्रकार देशज शब्द का अर्थ हुआ किसी स्थान विशेष पर जन्म लेनेवाला शब्द। इस प्रकार जो शब्द संस्कृत, प्राकृत किसी मूल भाषा में नहीं आए हैं, किंतु देश में प्रचलित हैं, उन्हें देशज शब्द कहते हैं। इस संदर्भ में साहित्यकार राहुल का मानना है, 'ये शब्द हिंदी के जीवनकाल में लोक-व्यवहार में अज्ञात रूप से सहसा अथवा किसी ध्वनि के अनुकरण पर निर्मित हो गए हैं। संभव है कि द्रविड़ या ऑस्ट्रिक भाषाओं से आए हो।' धर्मवीर भारती के कथा-साहित्य में प्रयुक्त देशज शब्द कुछ इस प्रकार हैं - पिल्ला, खिड़की, झगड़ा, डिबिया, गली, कूड़ा, घेंघा आदि।

विदेशज: ऐसे शब्द जो अन्य भाषाओं से आए हो, उन्हें विदेशी या म्लेच्छ भाषा कहा गया है। विदेशी भाषा से हिंदी में आए शब्दों को विदेशज कहते हैं। इनमें तुर्की, अरबी, फारसी, अंग्रेजी, पुर्तगाली आदि भाषाएं महत्वपूर्ण हैं। हिंदी साहित्य में इन सभी को विदेशत माना गया है। इस शब्द के साथ सबसे महत्वपूर्ण बात ये है कि हिंदी में आने के साथ ही विदेशज भी हिंदी व्यकरण के नियमों का पालन करने लगता है। जहां तक धर्मवीर भारती का प्रश्न है, तो उनके कथा-साहित्य में निम्नलिखित विदेशज शब्द प्रयुक्त हुए हैं- औरत, खून, गरम, बीमार, पेशाब, रंग दिल, कंबख्त, हुक्का, हुनर, शाबाश, खत, मतलब, दुनिया, तमीज, दरवाजा, मेवा, उम्र, चेहरा, जवाब, ताकत इत्यादि।[5]

इसी प्रकार रघुवीर सहाय की कहानियों का शिल्प और वैशिट्य आंतरिक संरचना उनके बहुमुखी रचनाकार होने की वजह से है। उनकी सृजनात्मकता सबसे पहले एक कवि की सृजनात्मकता है, इसलिए उनकी दूसरी विधाओं की रचनाशीलता का आधार इसी से तैयार होता है। रास्ता इधर से है, कथा संग्रह की भूमिका में उन्होंने लिखा है, और कुछ न लिख पाने पर मैंने ये कहानियां लिखी है, आपके लिए निश्चय ही इसका कोई महत्व नहीं है, न होना चाहिए मैंने ये कहानियां क्यों और कैसे लिखीं, पर यह जानकर मुझे, एक रचनाकार को संतोष मिलता है कि इनमें से प्रत्येक रचना एक ना एक विधा का विकल्प है। शिल्प की दृष्टि से सहाय जी की प्रत्येक कहानी अनूठी नजर आती है। कहानी की कला में लेखक ट्रेन में स्वयं सफर करते हुए, आत्मालाप करता है। ट्रेन में सफर कर रहे यात्रियों की मनोदशा का भी पता चलता है। कुछ यात्री स्वयं सीट पर बैठकर खुद को भाग्यशाली समझते हैं और खड़े हुए यात्री अपने

को मजबूर और विवश पाकर अपने दुर्भाग्य को कोसते हैं। 'एक यात्री ने बेंच पर दो यात्रियों की जगह पर अपना बिस्तर बंधा-बंधाया रख छोड़ा था और उस पर जमकर बैठा हुआ था। आगंतुक ने उससे पूछा, भाई दससे आप दो आदमियों की जगह नहीं निकाल सकते क्या?'[6]

रघुवीर सहाय की कहानियों में भी शब्द-भंडार की दृष्टि से उनकी रचनाएं और अभिव्यक्ति का पक्ष सशक्त बनकर उभरा है। इन्होंने अपनी कहानियों के माध्यम से भाषा जो आम आदमी के समीप होता है, का उपयोग अपनी कहानियों में बखूबी किया है। रघुवीर सहाय ने अपनी कहानियों के विषयवस्तु के रूप में राजनीति, राष्ट्र, महिलाओं, शोषितों, पीड़ितों, सामाजिक संबंधों एवं जन-समस्याओं संबेधी विषयों की प्रकृति को विशेष स्थान दिया है। आम बोलचाल की भाषा में तो इनके शब्दों के अथाह भंडार हैं, सहाय की कहानियों में मोटर, फिल्म, चीख, भूख, कुंठा, रोटी से लेकर झोपड़ी, आग आदि शब्दों का उल्लेख जमकर हुआ है।

इन शब्दों के अतिरिक्त रघुवीर सहाय ने अपनी कहानियों में मुहावरों एवं कहावतों का भी प्रयोग खूब किया है। साहित्य में रोचकता एवं सौंदर्यवृद्धि के लिए इनका महत्व अधिक है। उदाहरण स्वरूप न नौ मन तेल होगा, ना राधा नाचेगी, 'आधा तीतर, आधा बटेर'।[7]

सहाय की एक कहानी का एक अंश देखने पर यह समझ में आता है कि उन्होंने मुहावरों और कहावतों का प्रयोग अपनी कहानियों में कितनी खूबसूरती से किया है, 'जीवन में मृत्यु नहीं होती, मृत्यु तो ममत्व का दूसरा नाम है, सदैव सत्स बोलो। गांव का उजड़ना और शहरों का उखड़ना, गुलामी के मजे और आजादी का भय, नारी शक्ति की मूर्त मूर्ति है, फूल से फूल की शोभा है।'[8]

भाषा का वैशिष्ट्य कहानी की संवाद योजना से भी बढ़ता है। लेखक एक संवेदनशील मनुष्य होता है। उस पर घटनाओं का प्रभाव अपेक्षाकृत शीघ्र और अधिक होता है। वह जो कुछ सोचता, समझता, देखता और अनुभव करता है, उसको अपने भाषिक संवादों के द्वारा अपनी रचनाओं में उभारता है। उसकी भाषा में रस, छंद, अलेकार, प्रतीक, विंब, नाटकीयता, व्यंग्य, सुंदर संवाद के माध्यम से एक नया आयाम ग्रहण करते हैं। संवादों के द्वारा कही गयी बाता ही साहित्यक भाषा कहलाती है। रघुवीर सहाय की कहानियों में संवाद योजना, सामान्य बातचीत एवं भाषा की संप्रेषणीयता के कारण यथार्थ का बोध कराते हैं। विजेता कहानी के एक उदाहरण द्वारा इसे समझा जा सकता है, 'मैं सब ठीक कर दूंगा, तुम डरो नहीं। तुम कर ही क्या सकते हो, वह बोली। क्यों, जब मैं एक काम कर सकता हूं, तो दूसरा भी कर कसता हूं, तुम घबराती क्यों हो, तुम्हे बस थोड़ी सी तकलीफ होगी....'

इसी प्रकार की एक अन्य कहानी 'चालीस के बाद का प्रेम' का भी उदाहरण दिया जा सकता है,

'श्यामलाल जी ने कहा, बिल्ली है।
आपकी बिल्ली है, नौजवान ने पूछा।
जी हां, मेरी ही बिल्ली है, श्यामलाल जी ने कहा।
पुलिया के नीचे चली गयी है.....?' रघुवीर सहाय ने वाक्य-विन्यास की सहायता से भी अपनी कहानी को एक नया आयाम दिया है। हालांकि, उनकी कहानियां पूर्ण रूप से वैयक्तिक होने के कारण उन्हें पूर्णतया समझ पाना तो कठिन है, किंतु सामान्यत: कहा जा सकता है कि सभी प्रयोगों के लिए, सभी प्रकार के वाक्यों के प्रयोग को वह योग्य मानते हैं। वास्तव में उनका विषय, उसमें आयी भावना और विचारधारा तथा उसे प्रकट करने की अत्यंत संक्षिप्त वाक्य-रचना भी पर्याप्त रूप में दिखायी देती है। अज्ञेय के अनुसार, 'अपने छायावादी समवयस्कों के बीच बच्चन की भाषा जैसे अलग आस्वाद रखती थी और शिखरों की ओर न ताक कर शहर के चौक की ओर उन्मुख थी, उसी प्रकार विभिन्न मतवादी समवयस्कों के बीच रघुवीर सहाय भी चट्टान पर चढ़ नाटकीय मुद्रा में बैठने का मोह छोड़ साधारण घरों की सीढ़ियों पर धूप में बैठकर प्रसन्न है।'इस प्रकार हम कह सकते हैं कि रघुवीर सहाय की भषा इतनी प्रयोगात्मक है कि उसने अपनी विविधात्मक अस्मिताओं को बिसरा दिया है।[9]

संदर्भ

1. आधुनिक हिंदी कहानी संपा.- डॉ. गंगाप्रसाद विमल, कुछ कहानियों का गठनात्मक विवेचन: व्यावहारिक समीक्षा की पहल, पृष्ठ संख्या 170-71, सुरेन्द्र चौधरी
2. औक्सफोर्ड डिक्सनरी ऑफ करेंट इंग्लिश, पृष्ठ संख्या-1258 । बहत् हिंदी कोश, पृष्ठ - 1334
3. हिंदी साहित्यकोश, डॉ. धीरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ-10
4. रघुवीर सहाय रचनावली, भाग-2, पृष्ठ-11
5. भोलानाथ तिवारी, शब्द-विज्ञान, पृष्ठ-25
6. चंद्रकांत बांदीवडेकर, धर्मवीर ग्रंथावली, खंड-2, पृष्ठ-178
7. रघुवीर सहाय रचनावली, भाग-3, पृष्ठ-48
8. रामदरश मिश्र, समकालीन हिंदी कहानियां, पृष्ठ-13
9. रघुवीर सहाय रचनावली, भाग-2, पृष्ठ-113